मेरुमंदर पुराण

—भारतीय जन-मानस को सांस्कृतिक धरोहर से सम्पृक्त करने वाली कृति

समीक्षक : डॉ० रवीन्द्रकुमार सेठ

दिगम्बर जैन धर्म के प्रायः सभी महान् आचार्यों का आविर्भाव दक्षिण भारत में हुआ। जैन गुरुओं ने जन-मानस और राजवंश दोनों को धर्म के मार्ग की ओर प्रवृत्त किया; अपने त्यागमय जीवन, ज्ञानराशि तथा जनसेवा के समन्वय द्वारा समाज में अपना विशिष्ट महत्त्व प्राप्त किया। तमिल के आदि ग्रन्थ 'तिरुक्कुरल' और व्याकरण 'तोलकाप्पियम्' जैसे ग्रन्थों में उपलब्ध जैन-चिंतन इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि तमिल भाषा एवं साहित्य के कला एवं भाव पक्ष दोनों पर जैन विचारधारा का निश्चित प्रभाव है। तिरुक्कुरल में 'एनगुनत्तन्' (अष्ट गुण सम्पन्न), मलरमिसइ एहिनान्' (कमल पर चलने वाला) इत्यादि के प्रयोग के आधार पर तथा अनेक अन्य प्रमाणों का सविस्तार विवेचन करके श्री ए० चक्रवर्ती ने इसे जैन रचना ही स्वीकार किया है। इस विषय में यद्यपि पर्याप्त मतभेद हैं पर निःसन्देह जैन धर्म के मूल तत्त्वों एवं चिंतनधारा का उल्लेख महाकाव्य 'शिलप्पदिकारम्' में सविस्तार हुआ है। यह भी स्पष्ट है कि तमिल साहित्य के इतिहास-लेखकों ने प्रायः शैव और वैष्णव भक्ति-परम्पराओं का तो अध्ययन किया है पर जैन धर्म के विषय में उल्लेख अत्यल्प हैं। तिरुभंगै आक्वार का जैन मतावलम्बियों से शास्त्रार्थ, सम्बन्धर द्वारा जैन धर्म के मानने वालों का शैव बनाया जाना तथा पेरियपुराणम् में वर्णित जैनों पर हुए अत्याचारों में चाहे कितनी भी अतिशयोक्ति हो, इस धर्म के मतावलम्बियों का तमिल प्रदेश में अस्तित्व, उनका जीवन, चिंतन और संघर्ष प्रकारान्तर से हमारे समक्ष उभर कर आ जाता है।

आधुनिक जैन समाज की परम विभूति धर्मप्राण आचार्यरत्न श्री श्री १०८ देशभूषणजी महाराज द्वारा इसी विशाल जैन साहित्य की परम्परा में से एक ग्रन्थ 'मेरु पुराण' का मूल तमिल से अनुवाद और व्याख्या एक असाधारण कार्य है। इसके अनुवाद में उनकी आध्यात्मिक ऊंचाई एवं दार्शनिक विचार-प्रक्रिया का अद्भुत समन्वय हुआ है। एक अनासक्त कर्मयोगी की भांति राष्ट्र के रचनात्मक निर्माण में संलग्न मर्मज्ञ विद्वान् श्री देशभूषण जी के कार्य को जन-मानस से परिचित करवाने का अवसर प्राप्त कर मैं स्वयं को धन्य मानता हूं। मेरु मंदर पुराण तमिल भाषा में विरचित ग्रंथ है जिसे किन्हीं श्री वामनाचार्य ने रचा था। जयपुर चातुर्मास के समय आचार्य जी ने संवत् २०२८ में इसकी हिन्दी टीका की और संवत् २०२९ में इसका प्रकाशन हुआ। ५१० पृष्ठों के इस ग्रन्थ में मूल तमिल का देवनागरी लिप्यंतरण, अनुवाद और विस्तृत हिन्दी टीका प्रस्तुत की गई है। वामनाचार्य के जीवन, समय इत्यादि के विषय में प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं। हां, यह निश्चित है कि आप तमिल तथा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। कांचीपुरम् के निकट तिरुपति कुण्ड्र नामक गांव के प्राचीन जैन वृषनाथ भगवान् के मन्दिर में इस विषय में एक अस्पष्ट शिलालेख उपलब्ध है।

ग्रन्थ के समग्र १२ अध्यायों की कथा का सार प्रारम्भ में २० पृष्ठों में देने के उपरान्त ग्रन्थ के प्रत्येक पद की सविस्तार टिप्पणियां अपने आप में एक अनुभव है। जैन धर्म की गहन तात्त्विक समीक्षा, सहज सरल भावपूर्ण शब्दावली में हृदय के अन्तस्तल को छू लेती है। यह मात्र धर्म-ग्रन्थ नहीं है, इसमें अद्भुत् प्रकृति-वर्णन, मानव-स्वभाव चित्रण, जीवन-संघर्ष, तपश्चर्या के मार्ग में आने वाले अनेक कष्ट आदि का सहज, स्वाभाविक चित्रण हुआ है, पर धार्मिक दृष्टि सर्वोपरि है। शिवभूति मंत्री और भद्रमित्र की कथा के माध्यम से कंचन के दुष्प्रभाव, धन और रत्न के लोभ का कुपरिणाम और न्याय के महत्त्व का प्रतिपादन हुआ है। तीव्र परिग्रह की लालसा करने वाले मनुष्य तृष्णा के द्वारा संपत्ति का उपार्जन करने के लिए जो विभिन्न प्रयास करते हैं उनका विवेचन करते हुए कहा गया है कि अपहरण, चोरी आदि विधियों से प्राप्त संपत्ति शीघ्र नष्ट होती है, यशकीर्ति का नाश होता है; धैर्य, ऐश्वर्य आदि नष्ट होता है।

कतिपय अन्य प्रसंगों का अवलोकन करें तो इस ग्रन्थ में जीवन के अनेक सत्य उद्घाटित हुए हैं। सभी प्रकार के जीवों का हित करना, दया धर्म का पालन, दूसरे के दुःख से करुणा भाव उत्पन्न होना, बदला लेने की भावना का त्याग आदि गुणों का विवेचन करते हुए शास्त्रदान, औषधदान, आहारदान और अभयदान आदि का प्रतिपादन हुआ है। एक प्रसंग में भाषा की गरिमा देखते ही बनती है—"जीव दया रूपी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्त्री के साथ मिलकर, मन शोधन रूपी स्नेह से युक्त निद्रा रूपी रस्सी को त्याग कर वह सिंह चन्द्रमुनि तपरूपी स्त्री के साथ मग्न होकर तपश्चरण करने लगे।"

प्रबन्ध की कथा अनेक अन्तर्कथाओं से समन्वित है। इन अन्तर्कथाओं के माध्यम से धर्म और दर्शन तथा जीवन को त्याग की ओर उन्मुख करने का उपदेश काव्य का प्रमुख लक्ष्य है। अनेकानेक सूक्तिवचन इसमें सहज रूप से समन्वित हो गए हैं। चिंतन का आधार निरन्तर यही रहा है कि नरक में पड़े हुए जीवों की रक्षा करने वाला सच्चा साक्षी धर्म ही है। श्रद्धा-पूर्वक धर्माचरण का संदेश देते हुए अर्हंत भगवान् द्वारा कहे गए धर्म की अनेक प्रकार से व्याख्या की गई है। क्रोध, मान, माया और लोभ ये चार प्रकार के कषाय पाप कर्म के आस्रव को उत्पन्न करने वाले हैं। उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन और उत्तम ब्रह्मचर्य इन दस धर्मों तथा आगम पर श्रद्धा भक्ति स्तुति का उपदेश है। इसी मार्ग से अभ्युदय नाम के निःश्रेयस पद अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति सम्भव है। कहीं-कहीं बौद्ध धर्म के अनित्य आत्म-वाद का खण्डन भी हुआ है। कवि का मन नगर वर्णन, भवन वर्णन तथा अन्य प्रासंगिक वर्णनों में पर्याप्त रमण करता रहा है। एक उदाहरण पर्याप्त होगा—"उस धरणी तिलक नगर में अधिक से अधिक ऊंचाई में तथा ध्वजाओं से युक्त गोपुर थे और गोपुर के आस-पास बड़ी गलियां थीं। नगर में सुन्दर स्त्रियों की इतनी भीड़ रहती थी कि जिससे आने-जाने में बड़ी बाधा होती थी···इस प्रकार स्त्रियों तथा पुरुषों के चलने-फिरने में ऐसे शब्द होते थे जैसे पर्वत पर से नदी के पानी के गिरने की आवाज होती है।···उस महानगर में निवास करने वाली तरुण स्त्रियां सर्वगुण-सम्पन्न व रूप में सुन्दर, मधुर शब्दों से युक्त, एक क्षण में मन्मथ को वश में करने वाली थीं।···उस नगर में वीणा के तथा नृत्य करने वाली स्त्रियों की पैजनी के मधुर शब्द सुनाई दे रहे थे···।"

समग्रतः प्रकृति-चित्रण, मानव-सम्वेदनाओं का सम्यक् अध्ययन, जनजीवन के विभिन्न पक्षों के अनेक रम्य पक्षों का उद्घाटन करते हुए यह ग्रन्थ 'सत्य' के प्रतिपादन का ग्रन्थ है। बहुभाषाविज्ञ, सांस्कृतिक अनुचेतना के उद्बोधक महापुरुष श्री देशभूषण जी द्वारा अनूदित एवं व्याख्यायित होकर वामनाचार्य का यह मूल तमिल ग्रन्थ एक संग्रहणीय हिन्दी ग्रन्थ में परिणत हो गया है। धर्म में आस्था को सुदृढ़ करने, भारतीय जन-मानस को सांस्कृतिक धरोहर से सम्पृक्त करने तथा जैन धर्म के जिज्ञासुओं को अन्य स्रोतों से सामग्री का संचयन करने की प्रेरणा देने में इस 'मेरुमंदर पुराण' का निश्चित योगदान होगा।

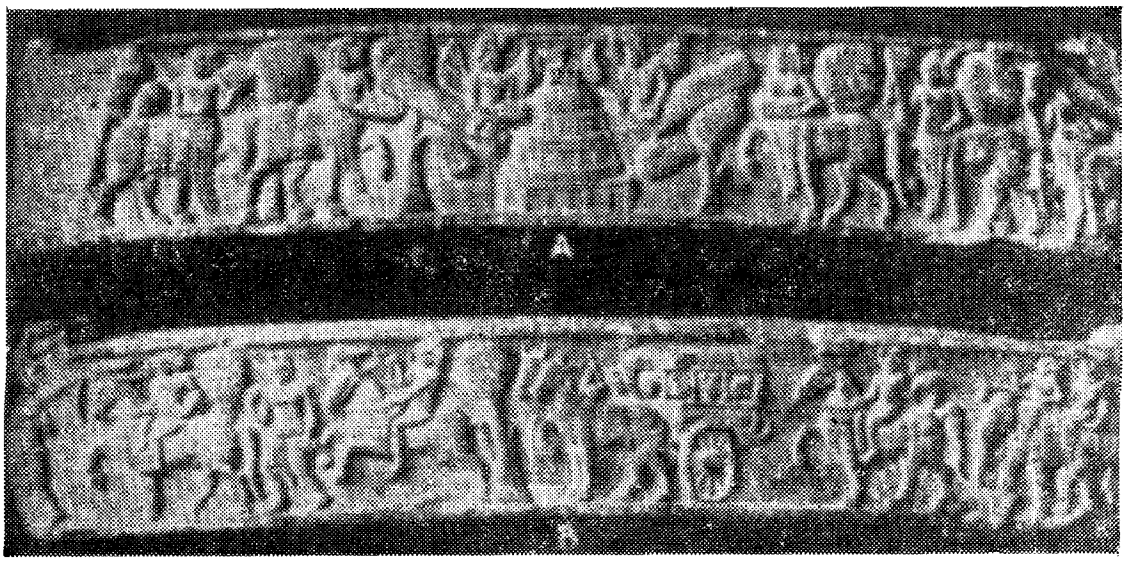

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org